स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विश्वविद्यालय, नांदेड

मानव्य विद्याशाखा अंतर्गत पीएच्डी. ;हिंदीद्ध उपाधि
हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध की रूपरेखा

''उत्तर आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में प्रतिनिधि हिंदी उपन्यासों का अनुषीलन''

(सन्-1980-2015 तक के प्रतिनिधि उपन्यास)

%% शोधछात्र %%

संतोश शिवराज पवार

एम.ए.(भूगोल, हिंदी), बी.एड्., सेट

:: शोधनिर्देशक ::

डॉ.बबन आर. बोडके

एम.ए.(हिंदी), बी.एड., पीएच्.डी.
सहाय्यक प्राध्यापक,
हिंदी विभाग
महात्मा फुले महाविद्यालय, किनगांव
ता.अहमदपूर जि.लातूर – 413523

अनुसंधान केंद्र

महाराष्ट्र उदयगिरी महाविद्यालय, उदगीर

दिसंबर, 2017

''उत्तर आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में प्रतिनिधि

हिंदी उपन्यासों का अनुशीलन''

(सन्-1980-2015 तक के प्रतिनिधि उपन्यास)

प्रास्ताविक :–

आधुनिकता ने मानव को अज्ञान से मुक्त करवाकर ज्ञानी और बौद्धिक बना दिया। किंतु पहले और दूसरे विश्व युद्धों के बाद समाज में अनेक विषमताएँ इस तरह निर्माण हुई की, जिनका जवाब आधुनिकता के पास नहीं था। भौतिक विकास और आर्थिक समृद्धि ने मानवी मूल्यों की बलि चढाते हुए मानव जीवन में बहुत सारी समस्याओं का निर्माण किया। आधुनिकता की इस चकाचक दुनिया में मानव पूरी तरह त्रस्त हो गया था, इसी कारण उत्तर आधुनिकता का जन्म तिसरी दुनिया से माना जाता है। आधुनिकता में तर्क और पूँजी की प्रधानता थी किन्तु उत्तर आधुनिकता में भावना और विकेंद्रीकरण को। अर्थात आधुनिकता की प्रतिक्रिया स्वरुप उत्तर आधुनिकता निर्माण हुई है। समाज, संस्कृति, अर्थव्यवस्था, राजनीति, कला, साहित्य, यौनचिंतन, सिनेमा, मूल्य आदि में उत्तर आधुनिकता के कारण बदलाव देखने को मिलता है।

उत्तर आधुनिकता सिध्दांत नहीं है, लेकिन अनेक सिध्दांतों का समावेश इसमें देखने को मिलता है। इसकी कोई निश्चित परिभाषा नहीं है। 'परिवर्तित लक्षणों को उत्तर आधुनिकता कहा जाता है।' उत्तर आधुनिकता यह ऐसा वाद है जो अस्थिर है, विखंडनशील है। उत्तर आधुनिकता बहुलतावाद, स्थानियता, अन्तर्विषयी चिंतन, अर्थ की अनिश्चितता आदि का स्वीकार करती है, वही सत्तावाद, पवित्रता, नैतिकता, स्वायत्तता एवं महाख्यानों को नकारती है। द्वितीय विश्वयुध्द के बाद तिसरी दुनिया में जन्मी यह विचारधारा हिंदी में सन 1980 के आसपास देखने को मिलती है। आज तक हिंदी के हर प्रकार के साहित्यिक विधा में किसी न किसी रुप में मौजूद है।

स्वातंत्र्योत्तर कालीन उपन्यासों में आधुनिकता दिखाई देती है। किंतु हिंदी उपन्यासों सन 1974 के कृष्ण बलदेव वैद कृत 'विमल उर्फ जाये तो जायें कहा' में पहले–पहल उत्तर आधुनिकता चिन्हित होती है। इस उपन्यास में आधुनिकतावादी मूल्यों का नकार है। 'यौन' को नये रूप में चित्रित किया है जो की उत्तर आधुनिकतावादी लक्षण है। 'अपनी सलीबें' नमिता सिंह द्वारा रचित उपन्यास है, जिसमें उत्तर आधुनिकतावादी तत्त्वों के दर्शन होते हैं। इसमें स्त्री अस्मीता कों रेखांकित किया गया है। 'मुझे चॉद चाहिए' सुरेंद्र वर्मा कृत उपन्यास में वर्षा वशिष्ठ

विद्रोहिणी स्त्रीवादी नायिका के रूप में उभरती हैं, जो बिना शादी के माँ बन जाती है। 'डूब' वीरेन्द्र जैन का उपन्यास है। इस में पात्र 'माते' के माध्यम से कथा कही गई है। विकास के नाम पर विनाश अर्थात बाँध से निर्वासित हुए ध्वस्त किसानों की त्रासदी है। 'कुरू–कुरू स्वाहा' में मनोहर श्याम जोशी ने उत्तर आधुनिकता को प्रस्तुत किया है। इसमें आधुनिक युगीन अस्तित्ववाद का अंत है। 'हरिया हरक्यूलीज' की हैरानी भी मनोहर श्याम जोशी द्वारा चित्रित है।

इन उपन्यासों के अलावा विनोदकुमार शुक्ल 'खिलेगा तो देखेंगे', मैत्रेयी पुष्पा का 'इदन्नमम', दुधना सिंह का 'नमो अंधकार', भिमसेन त्यागी का 'सुरंग', जयप्रकाश कर्दम का 'छप्पर', रामदरश मिश्र का 'बीस बरस', मिथेलश्वर का 'यह अंत नही', भगवान सिंह का 'अपने अपने राम', गिरिराज किशोर का 'पहला गिरमिटिया' उपन्यास है जो महात्मा गांधी पर आधारित है। इस उपन्यास के नायक महात्मा गांधी नहीं, मोहनदास है। कृष्णा सोबती का 'दिलो दानिश', आदि समकालीन उपन्यासों में नुतन दृष्टि मिलती है। इनकी भाषा नयें संदर्भों वाली है। इनमें न कुछ अपुर्व है न ही कुछ दार्शनिक है न कुछ आध्यात्मिक। ये उपन्यास कोई समाधान न प्रस्तुत कर खुले अंत के साथ रह जाते हैं। आज के समय में सभी समस्याओं का हल आदर्शों और नैतिकता से संभव नहीं है। आधुनिकता के मूल्य आज बदल गए है, उनकी व्यर्थता साबित हो रही है। इसलिए आज लेखन 'सृजन' नहीं, 'टेक्स्ट' है। इस टैक्स्ट में शाश्वत, पावन, स्थायी, कल्याणकारी, अध्यात्मिकता जैसे अर्थ संदर्भ है। साहित्य अब इस सृजनात्मकता की ओर कदम बढा दिया हैं, जिसे उत्तर आधुनिकता कहा जाता है। समकालीन उपन्यास वर्तमान समय और समाज का वर्णन करते हैं। इन उपन्यासों को पुरानी समीक्षाओं के आधार पर विश्लेषित नहीं किया जा सकता । उत्तर आधुनिकता के आधार पर ही नये उपन्यासों को समझकर वर्तमान समय और समाज को जान सकते हैं।

विषय – चयन की प्रेरणा :–

मुझे छात्र जीवन सें ही उपन्यास विधा कें प्रति रूचि रही है। मेरे पढने में कई सारे उपन्यास आए। लेकिन उत्तर आधुनिकता दर्शन के उपन्यासों ने मुझे प्रभावित किया क्योंकि ''उत्तर आधुनिकता वर्चस्ववादी शोषणकारी,सर्व सत्तावादी और जीवन रस को सोखने वाली प्रवृति का नकार करती है। उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यास ऐसी व्यवस्था का विरोध करते है जो 'शोषण' या 'केंद्रीयता' पर आधारित हो। इस कारण मैंने उत्तर आधुनिक कालीन कुछ उपन्यासों को सूक्ष्मता से पढा। मेरे मन को

इन उपन्यासों ने प्रभावित किया तब मेरे मन में बात आयी की,इसे शोध का विषय क्यों न बनाए! इस बारे में मार्गदर्शक डॉ.बबन बोडके से कई बार विचार–विमर्श हुआ। उसकी फलश्रुति ''उत्तर आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में प्रतिनिधि हिंदी उपन्यासों का अनुशीलन ''नामक विषय का चयन हुआ।

विषय का महत्त्व :–

उत्तर आधुनिकता (POST MODERNISM) बीसवीं शताब्दी के दूसरे भाग में दर्शनशास्त्र,कला,वास्तुशास्त्र और आलोचना के क्षेत्रो में फैला एक सांस्कृतिक आंदोलन था जिसनें अपने से पहले प्रचलित आधुनिकता को चुनौती दी और सांस्कृतिक वातावरण बदल डाला। इस नई विचारशैली में विचारधाराओं, एक निर्धारित दिशा वाले सामाजिक विकास और वस्तुनिष्ठावाद के विरूध्द और संशयवाद, व्यक्तिपरकता और व्यंगोक्ति की ओर रूझान प्रचलित हो गया। उत्तर आधुनिक रचना 'स्वानुभव' रसिक नहीं, 'सर्वानुभव' रसिक बन गयी है। रचनाकार की दृष्टि 'स्व' से 'सर्वकेंद्री' बन गयी है। उत्तर आधुनिकता रचना वादविहीन है। दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, अल्पसंख्याक विमर्श, आदिवासी विमर्श, सर्वहारा विमर्श, मीडिया विमर्श, सेक्स विमर्श, दिव्यांग विमर्श, पर्यावरण विमर्श, किन्नर विमर्श, समलैंगिक विमर्श इसका परिणाम है। उत्तर आधुनिकता कालीन साहित्य किसी सवाल का जवाब नहीं देता खुद एक जवाब बन जाता है। उदार प्रजातंत्र, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और लोक स्वायत्ता को ही वह समीकरण मानता है जो मनुष्य को उसके संकट से उभार सकती है। उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यासों ने एक नये सृजनात्मक रूप की संभावनाओं की तलाश की है।इस कारण उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यासों का अपना अलग महत्त्व हैं।

शोध विषय के उद्देश :–

1. उपेक्षित वर्ग का अध्ययन लोकतांत्रिक समाज के लिए हितकारी होता है।
2. उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यासों में विकेंद्रित मूल्यव्यवस्था का अध्ययन करना।
3. उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यासों में चित्रित दलित,मजदूर,स्त्री,आदिवासी आदि को समझना।

4. उत्तर आधुनिकता का हिंदी उपन्यास साहित्य लेखन पर के प्रभाव को समझना।
5. उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यासों की भाषाशिल्प का अध्ययन करना।

अंतर्विद्याशाखीय अध्ययन :–

वर्तमान समय में अनुसंधान करते समय अंतर्विद्याशाखीय अध्ययन करना शोध के लिए आवश्यक माना जा रहा है,क्योंकि साहित्य केवल साहित्य नहीं होता है। वैसे साहित्य और समाज का अन्र्तसंबंध होता है। अगर हमें उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यासों को अच्छी तरह से समझना है तो अर्थशास्त्र, राज्यशास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास, भूगोल, मनोविज्ञान आदि शास्त्रों के पारस्परिक संबंधों को हमें समझना होगा। तभी उसका न्यायोचित मूल्यांकन होगा। उत्तर आधुनिकता कालीन उपन्यास साहित्य को हमें गंभीरता से समझना है तो उपर्युक्त शास्त्रों का हमें ज्ञान होना चाहिए इसलिए प्रस्तुत शोध विषय अंतर्विद्याशाखीय अध्ययन में आता है।

विषय की मौलिकता :–

मेरी जानकारी के तहत प्रस्तुत शोध के पूर्व इस शीर्षक पर किसी ने भी, कहीं पर भी अनुसंधान नहीं किया है, इस दृष्टि से प्रस्तुत विषय की अपनी मौलिकता है।

विषय की व्याप्ति और सीमा :–

कोई भी कार्य सुचारू होने के लिए उसकी अपनी सीमा और सुनियोजन होना चाहिए। इसी कारण, मैंने उत्तर आधुनिकता कालीन प्रतिनिधि हिंदी उपन्यास साहित्य तक विषय को सीमित रखा है, किंतु उत्तर आधुनिकता कालीन हिंदी उपन्यास साहित्य को विभिन्न कोनों से सूक्ष्म और गंभीर अध्ययन करना आवश्यक समझा है । इन उपन्यास साहित्य का सूक्ष्मता से अध्ययन करना प्रस्तुत शोध की व्याप्ति है।

अनुसंधान की दृष्टि से मैंने इस शोध को निम्नलिखित षष्ठ् अध्यायों में विभाजित किया है–

प्रथम अध्याय :उत्तर आधुनिकता : अवधारणा,स्वरूप और प्रवृति

1.1 उत्तर आधुनिकता : अवधारणा

1.2 उत्तर आधुनिकता : स्वरूप

1.3 उत्तर आधुनिकता : प्रवृति

1.4 उत्तर आधुनिकता और साहित्य

1.5 उत्तर आधुनिकता की उपलब्धियॉ

1.6 उत्तर आधुनिकता : लाक्षणिकताएँ

1.7 उत्तर आधुनिकता की समस्या

1.8 उत्तर आधुनिकता और हिंदी साहित्य

1.9 उत्तर आधुनिकता और उपन्यास साहित्य

1.10 उत्तर आधुनिकता : पश्चिमी और पूर्वी दृष्टि में अंतर

1.11उत्तर आधुनिकता : साहित्य और संस्कृति की नयी सोच

1.12उत्तर आधुनिकता : साहित्य और मीडिया

1.13उत्तर आधुनिकता और विखंडनवाद

द्वितीय अध्याय :उत्तर आधुनिकता और हिंदी उपन्यास

2.1 उत्तर आधुनिकता और हिंदी उपन्यास साहित्य

2.1.1 बीसवीं सदी का उत्तरार्ध

2.1.2 इक्कीसवीं सदी का पूर्वार्ध

तृतीय अध्याय : उत्तर आधुनिकता और हाशिए पर का समाज

3.1 आदिवासी वर्ग

3.2 दलित वर्ग

3.3 स्त्री वर्ग

3.4 अल्पसंख्याक वर्ग

3.5 कृषक वर्ग

3.6 मजदूर वर्ग

3.7 दिव्यांग वर्ग

3.8 तृतीय पंथी वर्ग

3.9 विस्थापित वर्ग

3.10 अनुसूचित जनजाति वर्ग

3.11 धर्मांतरित अल्पसंख्यक वर्ग

3.12 अनाथ वर्ग

चतुर्थ अध्याय :विकेंद्रित मूल्यव्यवस्था और समकालीन हिंदी उपन्यास

4.1 सत्ता में समान भागीदारी

4.2 सामाजिक न्याय

4.3 न्याय की समानता

4.4 लोकतंत्र का स्वीकार

4.5 धर्मनिरपेक्षिता

4.6 नवउदारवादी अर्थव्यवस्था

4.7 बंधमुक्त समाज रचना

4.8 यौन मुक्ति

4.9 स्त्री अस्मिता का स्वीकार

4.10 जातिविहीन समाज रचना

4.11 ग्रामीण सत्ता का विकेंद्रीकरण

4.12 इहवादी विचार

4.13 ज्ञान की जगह 'उपभोक्तावाद'

4.14 पूँजीवाद का विरोध

4.15 तकनिकी का स्वीकार

4.16 व्यवसाय स्वतंत्रता

4.17 राजनीति में विकेंद्रीकरण

4.18 प्रौद्योगिकी में भागिदारी

4.19 स्वास्थ्य संबंधि जागरूकता

4.20 जलसंधारण संबंधि बदलाव

4.21 पर्यावरण और विकास

4.22 विकास और विस्थापन

4.23 जैविकता और विकास

4.24 विकास और विनाश

4.25 व्यक्तिस्वतंत्रता

4.26 बहुलता का स्वीकार

4.27 जल, जंगल और जमीन का संरक्षण तथा संवर्धन

पंचम अध्याय : उत्तर आधुनिकता कालीन हिंदी उपन्यासों की भाषा

5.1 उत्तर आधुनिकता और भाषा

5.2 पाठ और भाषा

5.3 भाषा और विखंडनवाद

5.4 संकेतों की प्रणाली

5.5 बहुल ध्वन्यात्मकता

5.6 अखंडनीय बहुवचन

5.7 सामूहिक मानक

5.8 अदार्शनिक भाषा

5.9 अवकाश (स्पेस) की अवधारणा

5.10 मौलिकता को प्रश्नांकित करने वाली भाषा

5.11 कोलाज की प्रतीति

5.12 दलित अस्मिता भाषा विमर्श

5.12.1 प्रतिक्रियावादी भाषा

5.12.2 मध्यमवर्गीय मानसिकता की उपज

5.12.3 सवर्णवादी भाषा का विरोध

5.12.4 जातिनिरपेक्ष भाषा का स्वीकार

5.13 स्त्री अस्मिता भाषा विमर्श

5.13.1 पुरुषवादी भाषा का विरोध

5.13.2 लिंगभेद निरपेक्ष भाषा

5.14 आर्थिक उदारीकरण का भाषा पर प्रभाव

5.15 तत्वमीमांसी भाषा

5.16 मूल्य कुंजी

5.17 प्रतिमान

5.18 वाक्य विन्यास

5.19 मिथक

5.20 फैंटसी

5.21 प्रतीक

5.22 आँचलिक भाषा

5.23 लोकसांस्कृतिकता और भाषा

5.24 सत्ताधिष्ठित भाषा का नकार और मातृभाषा का स्वीकार

5.25 मुक्ति अपनी भाषा से ही

5.26 बाजारवाद और भाषा

5.27 भाषा में खुलापन

षष्ठ्म अध्याय : मूल्यांकन एवं निष्कर्ष

अ) आधार ग्रन्थ सूची

1. नरेंद्र कोहली–'महासमर', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1988
2. भगवान सिंह – 'अपने अपने राम', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1992
3. सुरेन्द्र वर्मा – 'मुझे चॉद चाहिए', राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1993
4. प्रभा खेतान – 'छिन्नमस्ता', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1993
5. वीरेन्द्र जैन – 'डूब', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1998
6. मिथिलेश्वर – 'यह अंत नही', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2000
7. मैत्रेयी पुष्पा –'चाक', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2004
8. नमिता सिंह – 'अपनी सलीबें', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2005
9. राजकमल चौधरी–'मछली मरी हुई',राजकमल प्रकाशन दिल्ली, सन् 2009
10. नरेन्द्र – 'ग्लोबल गाँव के देवता', ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009
11. दूधनाथ सिंह – 'नमो अंधकार', राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली सन् 2010
12. कृष्णा सोबती–'दिलो दानिश', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2010
13. प्रदीप सौरभ – 'तीसरी ताली', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2011

आ) संदर्भ ग्रंथ सूची :–

शोधछात्र | शोध निर्देशक

संतोष पवार | **डॉ.बबन बोडके**